Vagdhara: A Multilingual Peer Reviewed Research Journal (ISSN 2839-6197)
Vol. 1 No. 3 (2026): April-June; Website: https://vagdhara.in/index.php

21वीं सदी की साहित्यिक हिन्दी पत्रकारिता में प्रस्तुत समसामयिक प्रश्न

(सरस्वती, हंस, पाखी, विश्वरंग संवाद एवं नया ज्ञानोदय के विशेष संदर्भ में)

***मनीष कुमार उपाध्याय**

*शोधार्थी, हिन्दी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग

Received: September 09, 2026 *Accepted: November 07, 2026*

शोध सार

21वीं सदी में हिन्दी साहित्यिक पत्रकारिता ने साहित्य और समाज के बीच संवाद की एक सशक्त परंपरा का निर्माण किया है। साहित्यिक पत्रिकाएँ केवल साहित्य के प्रकाशन तक सीमित नहीं रहीं, बल्कि उन्होंने लोकतंत्र, सामाजिक न्याय, स्त्री-विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी प्रश्न, भाषा, संस्कृति, वैश्वीकरण, बाजारवाद, पर्यावरण, तकनीक तथा मीडिया जैसे अनेक समसामयिक प्रश्नों पर गंभीर हस्तक्षेप किया है। प्रस्तुत शोध-पत्र में सरस्वती, हंस, कथा, पाखी, विश्वरंग संवाद, प्रगतिशील वसुधा, नया ज्ञानोदय, बहुवचन, तद्भव तथा कथादेश जैसी प्रमुख साहित्यिक पत्रिकाओं के आधार पर समसामयिक-साहित्यिक प्रश्नों का विश्लेषण किया गया है।

बीज शब्द : स्त्री-विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी प्रश्न, भाषा, संस्कृति, वैश्वीकरण, बाजारवाद, पर्यावरण, तकनीक।

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्यिक पत्रकारिता का इतिहास भारतीय समाज के बौद्धिक विकास का इतिहास भी है। भारतेंदु युग से प्रारंभ हुई साहित्यिक पत्रकारिता ने महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन में सरस्वती से एक नई दिशा प्राप्त की। 21वीं सदी में साहित्यिक पत्रिकाओं का स्वरूप और अधिक व्यापक हुआ है। अब ये पत्रिकाएँ केवल कविता, कहानी और आलोचना तक सीमित नहीं हैं बल्कि समाज, राजनीति, संस्कृति, पर्यावरण, विज्ञान और तकनीक जैसे विषयों पर भी गंभीर विमर्श प्रस्तुत करती हैं।

आज साहित्यिक पत्रकारिता साहित्य और समाज के बीच सेतु का कार्य कर रही है। वह लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा करते हुए सामाजिक सरोकारों को प्रमुखता देती है।

साहित्यिक हिन्दी पत्रकारिता की अवधारणा

साहित्यिक पत्रकारिता वह पत्रकारिता है जिसमें साहित्यिक विधाओं के माध्यम से समाज के ज्वलंत प्रश्नों पर विचार किया जाता है। यह केवल रचनाओं का प्रकाशन नहीं बल्कि विचारों का सार्वजनिक मंच है।

21वीं सदी में साहित्यिक पत्रकारिता का उद्देश्य निम्नलिखित है—

- साहित्यिक चेतना का विकास।
- लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना।
- सामाजिक असमानताओं पर विमर्श।
- नई पीढ़ी के लेखकों को मंच प्रदान करना।
- वैश्वीकरण और बाजारवाद की आलोचना।
- सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण।

21वीं सदी के प्रमुख समसामयिक प्रश्न

इन पत्रिकाओं में जिन प्रश्नों पर सर्वाधिक चर्चा हुई है, वे हैं—

स्त्री विमर्श :-

भारतीय समाज पितृसत्तात्मक है यहाँ पर स्त्री की स्थिति हमेशा दोयम दर्जे की रही है। आरंभ में स्त्री-पुरुष को समान दृष्टि से देखा गया था, लेकिन अपनी शारीरिक संरचना के कारण पुरुष ने धीरे-धीरे नारी पर अपना आधिपत्य जमा लिया। जहाँ पर आर्य काल वैदिक युगद्ध में स्त्री को आदर की दृष्टि से देखा गया तो मुसलमानों के आक्रमण के कारण वह घर की चार-दीवारी में कैद हो गई। यहीं से स्त्री के दुर्भाग्य की कथा-आरंभ होती है। रीतिकाल में वह भोग्य बन गई थी उसको केवल भोग-विलास की वस्तु माना जाता था, लेकिन आधुनिक काल में महापुरुषों के योगदान के कारण स्त्री की स्थिति में कापफी सुधार हुआ है। पुरुष वर्चस्ववादी होता है वह अपना प्रभुत्व स्त्री पर बनाए रखना चाहता है। इसलिए वह तरह-तरह के प्रपंच चकर स्त्री को खुली हवा में सांस नहीं लेने देना चाहता है। आज हर जगह स्त्री हिंसा का शिकार हो रही है। चाहे वह पढ़ी-लिखी हो अथवा अनपढ़। अनपढ़ जहाँ पर आर्थिक शोषण, यौन शोषण आदि को सहन कर रही है। वहाँ पर पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ मानसिक यंत्राणा का शिकार हो रही हैं। (पाखी – जून 2026, आलेख – भगवती चरण वर्मा का स्त्री चिंतन, पृ. सं.- 63) में हम देखने को मिलता है जैसे भगवती बाबू की स्त्री विषयक रचनाओं में आदर्श की उच्चता, दर्शन की वायवीयता और मान्यताओं के मकड़जाल में नारी की स्थिति का दयनीय चित्रण है। उनके उपन्यासों में स्त्रियां अक्सर दो विपरीत धुनों पर खड़ी होती हैं। एक पति और परिवारं की दुनिया में तल्लीन है, व्यस्त है और दूसरी जो विद्रोह कर अपने स्वतंत्र अधिकारों की मांग करती है। 'रेखा' उपन्यास में यौन अतृप्ति से पीड़ित और 'भूले-बिसरे चित्र' में सामाजिक द्वंद्व से जूझती स्त्री का चित्रण जिस प्रभावपूर्ण विधि से प्रस्तुत किया है वह उनके लेखन कौशल को तो दर्शाता ही है, साहित्यिक ईमानदारी का भी परिचय देता है। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण तथ्य जो उभर कर आती है, वह है रचनाकार का चिंतन। समय के उस दौर में स्त्री की यौनाकांक्षा और स्त्री मनोविज्ञान जैसे सामान्य जन की दृष्टि से ओझल विषयों को अपने उपन्यासों के केंद्र में रखना यह सिद्ध करता है कि भगवती बाबू का चिंतन अपने समय से बहुत आगे का था। उन्होंने चले आ रहे स्त्री विषयक साहित्यिक मानदंडों और एक तरफा आदर्शों में कैद स्त्री को साहित्यिक आजादी दी। तरफा आदर्शों में कैद स्त्री को साहित्यिक आजादी दी। वस्तुतः भारत के स्वातंत्र्योत्तर काल के समाज में स्त्री की इच्छाएं, आकांक्षाएं और उसकी सामाजिक स्थिति के अंतर्विरोधों के मध्य स्त्री के द्वंद्व और कठिनाइयों को वर्मा जी ने बखूबी समझा और अपनी संवेदनशील कलम से उसको अपने साहित्य में उतारा। उनकी स्त्री समाज और व्यक्तिगत स्तर पर जटिल भूमिका निभाती दृष्टिगोचर होती हैं। इसी अंक में सत्यनारायण राव जी की लघुकथा " जन्नत की ख्वाहिश '' (पृ.सं.-53)में एक महिला जो अपने स्वर्ग की कामना हेतु गाय और कुत्ते को रोज रोटी खिलाती है पर एक दिन कुत्ते के लिए फेंकी गई रोटी को भिखारी बच्चे के द्वारा उठा कर खाने पर उसको बहुत डांटती है और रोटी छिन कर कुत्ते के आगे डाल देती है,बच्चा कहता है कि ' माई कल से कुछ नहीं खाया आपने फेंकी तो उठा लिया,देखो ना माई रोटी तो कुत्ते ने भी नहीं खायी, मैं खा लूंगा दे दो ना...! जा भाग यहां से शैतान कहीं का ...!' जिसमें व्यक्ति के भूख से ज्यादा किसी को अपनी महत्वाकांक्षा प्रिय है। इसी अंक में सुशांत सुप्रिया की लघुकथा 'सौदा' (पृ. सं-56)में झुनिया का गरीब बाप तेरह साल की झुनिया की शादी गांव के बूढ़े साहूकार से कर रहा था। साहूकार से उसने बहुत सारा रुपया कर्ज ले रखा था। दरअसल यह शादी कम थी, बल्कि ब्याज न दे पाने के कारण लड़की को एक बूढ़े के हाथ बेच देना अधिक था। यह उड़ीसा का कालाहांडी इलाका था जहां अकाल और भूखमरी का राज था।

दलित विमर्श:-

दलित विमर्श जाति आधारित अस्मिता मूलक विमर्श है। इसके केंद्र में दलित जाति के अंतर्गत शामिल मनुष्यों के अनुभवों, कष्टों और संघर्षों को स्वर देने की संगठित कोशिश की गई है।

यह एक भारतीय विमर्श है क्योंकि जाति भारतीय समाज की बुनियादी संरचनाओं में से एक है। इस विमर्श ने भारत की अधिकांश भाषाओं में दलित साहित्य को जन्म दिया है।हिंदी में दलित साहित्य के विकास की दृष्टि से बीसवीं सदी के अंतिम दो दशक बहुत महत्वपूर्ण हैं।

सरस्वती, जुलाई- सितंबर 2024 अंक: 3 में श्याम बिहारी महतो की 'हासिल' (पृ. सं. -46)कहानी में दलित विमर्श के संबंध में लिखी हुई है जिसमें सुकरा दा जो कोयलरी में मजदूरी कर अपना जीविका निर्वहन करता था। किसी भी प्रकार की नशा से दूर था, पर गलत संगत के कारण वह शराब और वैश्यगमन की आग में अपना सब कुछ होम कर, कर्ज व बदनामी की चादर ओढ़कर अंत में अपनी रखैल 'मनमतिया' की गला काटकर हत्या वह खुद को फांसी लगाकर जीवन लीला समाप्त कर लेता है। इसी अंक में संजय कुमार सिंह द्वारा लिखित 'सूअर' कहानी (पृ. सं.- 70) में 'गौतम कुमार' जो डोम जाति का वाराणसी के डोम राजा के परिवार से तालुकात रखता है व मंजरी जो राजपूत परिवार से होती है, दोनों साथ- साथ ही

पढ़ते हैं, इनके बचपन का अधिकांश समय एक साथ ही खेलने में व्यतीत हुआ होता है. पढ़ने में अव्वल होता है गौतम जो आगे चलकर कलेक्टर बनता है और मंजरी के बुलवाने पर उसके शादी के वर्षगाँठ पर उसके घर जाता है पर एक कलेक्टर की हैसियत से न की एक दोस्त की भांति पर उसे मंजरी के घरवालों के द्वारा उसकी जाति को लेकर ताना दिया जाता है कि चाहे जो भी हो जाए पर यह डोम के डोम ही रहेंगे और उसके जाने के बाद सारे घर को धुलवा देते हैं।

हंस, जुलाई- सितम्बर,2024, अंक: 3 में अवनीश यादव अपने आलेख 'मानव और पशु दोनों की मुक्तिदाता: 'मुर्दहिया' में कहते हैं - "जहाँ तक असल सवाल 'मुर्दहिया' के मूल्यांकन का है साहित्य के अन्य विधाओं की भांति इस विधा के भी कुछ अपने टूल्स हैं मसलन- वैक्तिक्यता, आत्मलोचन, आत्मोद्घाटन और आत्मगोपन। परंतु नब्बे के दशक के बाद या विशेष आत्मकथाओं पर यह लागू ही हो यह आवश्यक नहीं। हाँ इतना ज़रूर है कि स्वयं लेखक द्वारा प्रस्तुत किया गया अपना जीवन वृत्तांत ही आत्मकथा है। इसके लेखन में लेखक की ईमानदारी की परीक्षा होती है। इसमें न तो आत्मप्रशंसा होनी चाहिए और न ही व्यक्तिगत दोषों के दुराव की प्रवृत्ति। बकौल राजेंद्र यादव, 'आत्मकथा समय के न्यायाधीश के समक्ष दिया गया बयान है।''अब देखना यह है कि 'मुर्दहिया' में समय की शिला पर कितने बयान दर्ज हैं जो आपबीती से जगबीती का आख्यान रचते हैं। बहरहाल, मुर्दहिया के कथ्य की शुरुआत लेखक तुलसीराम ने बड़ी बेबाकी से अपने उत्तरप्रदेश के आज़मगढ़ जिले के 'धरमपुर' गाँव में दलित परिवार के रूप में रहने वाली अपने पिता के पाँच भाईयों सहित एवं बूढ़ी दादी माँ से बने संयुक्त परिवार तथा उस क्षेत्र में स्थित मुर्दहिया एवं उससे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष संबंध रखने वाले जीव-जंतुओं का हवाला देकर करते हैं। यदि घर के सदस्यों पर नज़र डालें तो प्रत्येक सदस्य का व्यक्तित्व तत्कालीन समय- समाज को प्रभावित करता है। सबसे बड़े सोम्मर चाचा जो आज़ादी के पूर्व से ही बारहगाँवा के चौधरी चुने जाते थे (बारह गाँव के चमारों की बृहद पंचायत के व्यवहारिक न्यायाधीश) बड़े तर्कबाज थे, पर उनकी बातों में वजन और निष्पक्षता होती थी। दूसरे और तीसरे नंबर के भाई मुनेस्सर और गुस्सैल नग्गर थे। ये दोनों उप्र में प्रचलित प्रसिद्ध 'शिवनारायण पंथ' के 'धर्मगुरु' थे। इन दोनों गुरुओं के दर्जनों अलग-अलग चेले थे, जो दूर-दूर के गाँवों में फैले हुए थे। शिवनारायण पंथ की सबसे बड़ी विशेषता यह कि इसके संस्थापक शिवनारायण स्वयं उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के एक क्षत्रिय थे, किंतु उनके अनुयायी सिर्फ दलित जाति के लोग बने।

वर्तमान समय में युद्ध और जीवन:-

प्राचीन काल के युद्धों की स्मृति मात्र ही हमें एक ऐसे युग में ले जाती है, जहाँ शस्त्रों का स्वरूप प्राकृतिक और सीमित था। पुराने समय के धनुष बाण से लड़े जाने वाले युद्ध एक प्रकार से ईको फ्रेंडली कहे जा सकते थे क्योंकि उनमें प्रयुक्त सामग्री सीधे तौर पर प्रकृति से आती थी और पुनः उसी में विलीन हो जाती थी। उस दौर में न तो ज़हरीली गैसों का उत्सर्जन होता था और न ही मिट्टी की उर्वरता को सदा के लिए नष्ट करने वाले घातक रसायनों का प्रयोग किया जाता था। एक योद्धा के तरकश से निकला बाण केवल लक्ष्य को भेदता था। आज की मिसाइलें पूरे पारिस्थितिकी तंत्र को ही छलनी कर देती हैं।

आज की बारूदी मिसाइलों और आधुनिक हथियारों से पर्यावरण को जो अपूरणीय क्षति हो रही है, वह किसी भी राजनीतिक विजय से कहीं अधिक महंगी है। जब कोई मिसाइल दागी जाती है, तो वह केवल जीवन ही नहीं लेती बल्कि वातावरण में भारी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड और सल्फ्यूरिक एसिड जैसे हानिकारक तत्व घोल देती है। युद्ध क्षेत्रों में होने वाले विस्फोटों से निकलने वाला सूक्ष्म गर्द और जहरीला धुआं मीलों दूर तक फैलकर लोगों के फेफड़ों में ज़हर भर रहा है।बमबारी से होने वाले कंपन और रसायनों के रिसाव के कारण भूजल स्तर न केवल दूषित हो रहा है बल्कि मिट्टी अपनी पैदावार की क्षमता भी खो रही है। यह विनाश केवल वर्तमान तक सीमित नहीं है, अपितु आने वाली पीढ़ियों को एक ऐसा बंजर संसार विरासत में दे रहा है जहाँ सांस लेना भी एक संघर्ष होगा। नया ज्ञानोदय अप्रैल- मई 2026 में फिलिस्तीनी लेखिका डोनिया अल- अमल इस्माइल की फिलिस्तीन कहानी 'खजूर और कड़वी कॉफी'(पृ. सं.-46) जिसका अनुवाद बालमुकुंद नंदवाना जी ने किया है। जिसमें लेखिका दो देशों के युद्ध में मरते नौजवान और उनकी याद में बेसुध होकर गिरती माएं जो बार – बार उसको पुकारती हैं उसको पुनः घर लौट आने की नमाज में दुवाएं करती है वही दूसरी ओर राजनीति से जुड़े लोग उसकी अंतिम यात्रा में शामिल होकर विरोधी देश को नफरत से गालियाँ और बदला लेने की कसमें खाते हैं फिर आसमान में बेतहाशा गोलियां छोड़ते हुए घाव को और जिंदा करते हैं। इसी अंक में तुर्की कवि 'नाज़िम हिकमत की 'नन्हीं लड़की' कविता है जिसमें वो कहते हैं युद्ध की भयावहता में जो बच्चें मर गए हैं वो अब दिखाई नहीं देते,उनको हर दरवाजे से पुकारा जा रहा है। लड़की कहती है कि जब मैं मरी थी हिरोशिमा में, तब सात साल की थी,यह घटना बीते अब दस वर्ष बीत गए है,उस युद्ध में जो बच्चें मर गए हैं वो फिर जीवित नहीं होते। लड़की कहती है पहले मेरे बालों में आग लगी फिर जल गई मेरी आँखें झुलस कर, कुछ ही समय में मैं बदल गई मुट्ठी भर राख में, फिर मेरी राख उड़ गयी हवा

में। यह युद्ध जो शुरू करता है उनसे कहती है कि मैं यहां कहने नहीं आयी आप से, कुछ करने को मेरे खुद के लिए,एक जल चुकी बच्ची मिठाई भी तो नहीं खा सकती है। अंत में वो कहती है प्रार्थना के रूप में मैं आपके द्वार पर हूं मैडम, सर,आपका हस्ताक्षर लेने के लिए। ताकि बच्चें फिर कभी न मरे जाएँ,ताकि वे भी मिठाई खा सकें। वही फिलिस्तीन कवि ' महमूद दरवेश' अपनी कविता 'समाप्त हो जाएगा युद्ध'(पृ. सं.-50-51)में कहते हैं कि समाप्त हो जाएगा युद्ध उसके बाद राजनेता आपस में हाथ मिलाएंगे,वृद्ध महिलाएं इंतजार करती रहेंगी अपने शहीद बेटे के लौट आने की, वह लड़की भी इंतजार करेगी अपने अपने प्रिय पति का, और वे बच्चें भी प्रतीक्षा करेंगे अपने बहादुर पिता का,कवि कहते हैं कि मैं नहीं जानता कि किसने बेचा हमारा वतन किंतु मैं जानता हूं किसने कीमत चुकाई है।

पर्यावरण:-

पर्यावरण शब्द का निर्माण दो शब्दों परि और आवरण से मिलकर बना है, जिसमें परि का मतलब है हमारे आसपास अर्थात जो हमारे चारों ओर है, और 'आवरण' जो हमें चारों ओर से घेरे हुए है। पर्यावरण उन सभी भौतिक, रासायनिक एवं जैविक कारकों की कुल इकाई है जो किसी जीवधारी अथवा पारितंत्रीय आबादी को प्रभावित करते हैं तथा उनके रूप, जीवन और जीविता को तय करते हैं। हंस सितंबर,2009 अंक: 2 में रेणु खंतवाल की कविता 'नदी और पहाड़' (पृ.सं.-48)में वे कहती हैं तुम कहते हो कि जब मैं पिघल कर नदी और झरने का आकार लेकर बहती हूं तब मेरा स्वरूप तुम्हें बहुत सुंदर दिखता है। मेरा होना तुम्हारे सौंदर्य को बढ़ा देता है, लेकिन सच तो ये है कि मेरा होना ही तुमसे है,मेरा सौंदर्य ही तुमसे है, सालभर तुम्हें अपनी आग़ोश में बर्फ की शक्ल लिए छिपाए रहती हूं मैं। और हल्के से सूरज की ताप के पड़ते ही पिघलकर बहने लगती हूँ मैं, नदी झरने की शक्ल में लेकिन इस तरह तुमसे दूर जाना अच्छा नहीं लगता मुझें। मैं तो बर्फ की शक्ल में हमेशा तुम्हें अपने आग़ोश में समाए रखना चाहती हूं हमेशा के लिए जो कभी भी तुमसे दूर न जाना पड़े। इसी अंक में रमेश प्रजापति जी की कविता 'पहली ऋतु का फूल' जिसमें इन्होंने धरती की पहली ऋतु का पहला फूल सूरज को मानते हुए सूरज के प्रतिदिन निखरते वर्णनातीत आभा-मंडल के प्रति मोहविष्ट तन्मयता से आधुनिक दृष्टिकोण से सूरज के प्रति संवेदना व्यक्त की है।

साहित्य में मज़दूर की उपस्थिति:-

कभी कलकत्ता में मृत्यु शैय्या पर पड़े प्रसिद्ध वैज्ञानिक जे.बी.एस. हाल्डेन ने एक कविता लिखी थी : "कैंसर भी एक विचित्र वस्तु है।" ग़रीबी की विचित्रता भी कुछ कम नहीं है। इसके प्रति एक नज़रिया यह भी है : "लोगों को इतना ग़रीब नहीं होने देना चाहिए कि उनसे घिन आने लगे, या वे समाज को नुकसान पहुँचाने लगें ! इस नज़रिये में ग़रीबों के कष्ट और दुखों का नहीं बल्कि समाज की असुविधाओं और हालातों का महत्त्व अधिक प्रतीत होता है। ग़रीबी की समस्या उसी सीमा तक चिन्तनीय है जहाँ तक कि उसके कारण, जो ग़रीब नहीं हों उन्हीं भी समस्याएँ भुगतनी पड़ती हैं।'

ग़रीबी में निर्वाह दुखद हो सकता है, किन्तु उसके कारण यदि अन्य लोगों को, जो ग़रीब नहीं हैं, घिन आये या कष्ट हो तो इससे बुरी बात क्या होगी ! मानव को मात्र संसाधन बना डालने का प्रयास इससे बढ़कर क्या होगा !

नया ज्ञानोदय, अंक 171, मई 2017 में अमर्त्य सेन की 'गरीबी की अवधारणाएं' (पृ. सं.- 22)में गरीबी के कारणों को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखते हुए जीवनशास्त्रीय,विषमता विधि,सापेक्ष अभाव,गरीबी : एक विवेकबोध,गरीबी : नीति विषयक परिभाषा,मानदंड एवं समुच्चयन,गरीबी : पहचान एवं समूहन, प्रत्यक्ष विधि बनाम आय विधि, परिवार का आकार और वयस्क – सम सदस्य संख्या, गरीबी के अंतराल एवं सापेक्ष अभाव,गरीबी के मानकों की समालोचना,गरीबी के माप और उसके प्रकारांतरों की स्वयंसिद्ध व्युत्पत्ति आदि बिंदुओं पर विस्तृत रूप से विचार किया है। इसी अंक में राधेश्याम तिवारी की 'मुठभेड़'(पृ.सं.66-67)कहानी जिसमें इन्होंने रेलवे स्टेशन पर कार्यरत मजदूरों की समस्या को बखूबी दिखलाया है। इसी अंक में विश्व कविता श्रम, संघर्ष और झुलसती उत्सुकता के प्रति चयन और अनुवाद सुरेश सलिल के द्वारा फ्रेंच कवि ज्याँ आर्थर राम्बो की कविता 'कामगार' में अपने बचपन में गरीबी में गुजरी दिनों की स्मृतियों को याद करते हुए वो लिखते हैं कि फरवरी महीने की एक गुनगुनी भोर अनचाहे दक्खिन ने जोड़ दी फिर हमारे गर्हित भिखमंगे दिनों की हमारी कच्ची गरीबी की यादों की डोर। तुर्की कवि नाज़िम हिकमत की 'तुम्हारे हाथ और उनके झूठ'(पृ.सं.50-51)में कवि ने सरकार और पूंजीपतियों की चालाकीपूर्ण वादा जो करके उनसे काम लिया जाता है पर काम खत्म होते ही उन्हें उचित मूल्य न दे पाना। जिसका विरोध करते हुए कवि कहते हैं कि ये दुनिया गाय-बैल के सींगों पर नहीं टिकी है दुनिया को ढोते हैं तुम्हारे हाथ।मेरे हमख़यालों, ओ मेरे हमख़यालों, वे तुम्हें दबाने को झूठ देते हैं जबकि तुम भूख से छटपटा रहे हो, जबकि तुम्हें रोटी और सालन की ज़रूरत है।

दरख़्त फलों से लदे हुए हैं और तुम फ़क़त एक बार सफ़ेद मेज़पोश से सजी टेबल पर खाने की हसरत दिल में लिए हुए दुनिया के कूच कर जाते हो !

मेरे हमख़यालों, ओ मेरे हमख़यालो, ख़ासकर तुम, जो एशिया-अफ्रीका के हो, तुम जो निकट पूर्व, मध्य पूर्व, प्रशान्त द्वीपों के हो और तुम, जो मेरे अपने वतन के हो, तुम, जो दुनिया की कुल इंसानी आबादी का सत्तर फीसदी से भी ज़्यादा बड़ा हिस्सा हो, अपने हाथों जैसे ही पिछड़े और ख़याली हो तुम फिर भी उन्हीं के जैसे कुतूहली, जोशीले और ज़िन्दादिल।

हिंदी व वैश्विक साहित्य:-

पाखी अप्रैल – 2026, अंक: 7 में पाखी संवाद में संपादक अपूर्व जी द्वारा लिखित लेख 'निराले थे महाप्राण निराला'(पृ.सं.-86-89)में 'राम की शक्तिपूजा' की विभिन्न दृष्टियों से व्याख्या की है। इसी अंक में 'शताब्दी की विलक्षण कवयित्री को – एडना सेंट विसेंट मिल्ले जो अमेरिका के मेन राज्य के रॉकलैंड में जन्मी जो स्वतंत्र – स्त्री चेतना,प्रेम, विद्रोह और मानवीय संवेदना की मुखर आवाज थी। विश्वरंग संवाद,अंक:14,अक्टूबर,2025-मार्च, 2026 (संयुक्तांक) (पृ.सं.-03)में हिन्दी कविता का उद्भव और विकास - उमाशंकर चौधरी , ब्रज और अवधी का हिंदी कविता संदर्भ व विवाद - श्री प्रकाश शुक्ल, भारतेंदु युग की स्त्री कविता -गरिमा श्रीवास्तव, द्विवेदी युग परिस्कार परिमार्जन का युग- प्रेम जन्मेजय, स्वतंत्रता बोध और राष्ट्रीय चेतना का काव्य -हेमंत कुकरेती, छायावाद एक पुनर्पाठ-सुधीर पचौरी, समकालीन कविता-ए. अरविंदाक्षन,कविता की जमीन पर बदलता समयबोध-विजय कुमार,स्त्री कविता आदि विस्थापित का भाषा घर- अनामिका, अकविता आंदोलन एक पुनरावलोकन-राजाराम भादू,हिंदी दलित कविता की विकास यात्रा- बजरंग बिहारी तिवारी,आदिवासी कविता- हरिराम मीणा, समकालीन कविता अवधारणा और प्रस्थान-अच्युतानंद मिश्र, कविता और विज्ञान- संतोष चौबे आदि द्वारा लिखित आलेख हैं, जिनमें सभी विषयों पर महत्वपूर्ण चिंतन व्यक्त किए गए हैं।

21वीं सदी की हिन्दी साहित्यिक पत्रकारिता ने साहित्य को समाज के व्यापक सरोकारों से जोड़ा है। 'सरस्वती' से लेकर 'कथादेश' तक की पत्रिकाओं ने साहित्यिक विमर्श के साथ-साथ लोकतंत्र, सामाजिक न्याय, स्त्री-अस्मिता, दलित अधिकार, आदिवासी जीवन, पर्यावरण, वैश्वीकरण और सांस्कृतिक संकट जैसे गैर-साहित्यिक प्रश्नों को गंभीरता से उठाया है। इन पत्रिकाओं ने यह सिद्ध किया कि साहित्य समाज से पृथक नहीं, बल्कि उसका सक्रिय दर्पण और परिवर्तनकारी माध्यम है।आज डिजिटल युग में साहित्यिक पत्रकारिता के सामने आर्थिक संकट, पाठक संख्या में कमी और सोशल मीडिया की चुनौती जैसी समस्याएँ हैं, फिर भी इन पत्रिकाओं ने वैचारिक स्वतंत्रता, लोकतांत्रिक मूल्यों और मानवीय संवेदनाओं को जीवित रखा है। इसलिए 21वीं सदी की हिन्दी साहित्यिक पत्रकारिता समकालीन भारतीय समाज की वैचारिक धरोहर के रूप में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

संदर्भ

1. रामचंद्र तिवारी – हिन्दी पत्रकारिता का इतिहास।
2. अर्जुन तिवारी – हिन्दी पत्रकारिता : स्वरूप और विकास।
3. वेदप्रताप वैदिक – हिन्दी पत्रकारिता : विविध आयाम।
4. सरस्वती।
5. हंस।
6. पाखी।
7. प्रगतिशील वसुधा।
8. नया ज्ञानोदय।
9. Prof. M. Rein,1971, problems in the definitions and measurement of property.
10. नामवर सिंह – आलोचना के बहाने।
11. रामविलास शर्मा – भाषा और समाज।
12. विश्वरंग संवाद।

■■■